वर्ष-१२ अंक-९
२७ मई २०१६

ओ३म्

पंजीयन संख्या म.प्र./भोपाल 32/2015-17
एक प्रति- २०-०० रु.

वैदिक रवि

मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा का प्रमुख पत्र

संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है ..

एक दृष्टि में आर्य समाज

- आर्य समाज की मान्यता का आधार सत्य सनातन वैदिक धर्म है।
- सनातन वह है जो सदा से था, सदा रहेगा। सत्य सनातन धर्म का आधार वेद है।
- वेद ज्ञान का मूल परमात्मा है।
- यही सृष्टि के प्रारंभ का सबसे पहला ज्ञान, पहली संस्कृति और समस्त सत्य विद्याओं से पूर्ण है।
- वेद ज्ञान किसी जाति, वर्ण, सम्प्रदाय या किसी महापुरुष के ज्ञान के अनुसार नहीं है और न ही किसी समय व स्थान की सीमा में बन्धा है।
- परमात्मा की कल्याणी वाणी वेद समस्त प्राणियों के लिए और सदा के लिए हैं।
- इसे पढ़ना-पढ़ाना श्रेष्ठ (आर्य) जनों का परम धर्म है।
- ईश्वर को सभी मानते हैं इसलिए विश्व शान्ति इसी ईश्वरीय ज्ञान वेद से संभव है।
- आर्य समाज-अविद्या, कुरीतियों, पाखण्ड व जाति प्रथा जैसी सामाजिक बुराईयों को दूर करने वाला तथा सत्य ज्ञान व सनातन संस्कृति का प्रचारक है।

ओ३म्
वैदिक-रवि
मासिक
वर्ष-१२ अंक-९
२७ मई २०१६
(सार्वदेशिक धर्मार्य सभा के निर्णयानुसार)
सृष्टि सम्वत् १,९६,०८,५३,११६
विक्रम संवत् २०७२
दयानन्दाब्द १९१

— सलाहकार मण्डल —
राजेन्द्र व्यास
पं.रामलाल शास्त्री 'विद्या भास्कर'
डॉ. रामलाल प्रजापति
वरिष्ठ पत्रकार

— प्रधान सम्पादक —
श्री इन्द्रप्रकाश गांधी
कार्या.फोन: ०७५५ ४२२०५४९

— सम्पादक —
प्रकाश आर्य
फोन: ०७३२४२२६५६६

— सह-सपादक —
मुकेश कुमार यादव
फोन: ९६२६१८३०९५

— सदस्यता —
एक प्रति- २०-०० रू.
वार्षिक-२००-०० रू.
आजीवन-१०००-०० रू.

विज्ञापन की दरें

आवरण पृष्ठ २ एवं ३	५०० रू.
पूर्ण पृष्ठ (अंदर)	-४००रू.
आधा पृष्ठ (अंदर का)	२५० रू.
चौथाई पृष्ठ	१५० रु

अनुक्रमणिका

क्र. विषय	पृष्ठ
संपादकीय	4
भतृहरि शतक	6
"वेद सुधा"	7
अपनी महानता को पहचानो	9
पं. मोतीलाल नेहरू, गायत्री मन्त्र	10
यज्ञ	13
वेदों की दृष्टि में धर्म का स्वरूप	17
विदेशियों की दृष्टि में गाय	19
गो मूत्र के सरलतम घरेलु औषधीय उपयोग	22
सुखी जीवन का रहस्य	23

जून माह के पर्व त्यौहार एवं जयंती

1	बालसुरक्षा दिवस
5	विश्व पर्यावरण दिवस
7	महाराणा प्रताप व छत्रसाल जयंती
8	गुरु अर्जुन देव पुण्यतिथि
9	बिरला मुण्डा शहीदी दिवस
13	ऊधम सिंह शहीदी दिवस
17	रानी लक्ष्मीबाई पुण्य तिथि
18	डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी पुण्यतिथि, शिवाजी राज्य अभिषेक दिवस
20	संत कबीर जयंती
21	अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस, गुरु हरगोविन्द जयंती
24	रानी दुर्गावती बलिदान दिवस, सिंधु सम्राट दाहर सिंह शहादत दिवस
26	अंतर्राष्ट्रीय नशा विरोध दिवस

सम्पादकीय :

अन्धविश्वास में समय और सम्पत्ति का कितना उपयोग, कितना दुरूपयोग

यदि किसी भी कार्य को व्यवस्थित और उद्देश्य के साथ किया जाता है तो उसके परिणाम उचित और लाभकारी होते हैं। किन्तु कितने भी बड़े आयोजन हों यदि उनका कोई उद्देश्य न हो तो उस आयोजन का कोई महत्व नहीं रहता है। धर्म जो मनुष्य को जीवन की एक सही राह दिखाता है, व्यक्ति, परिवार, राष्ट्र के प्रति अपने कर्तव्यों को एक सही दिशा निर्देश देता है, वह आज मनोरंजन के रूप में दिखाई दे रहा है।आजकल बड़े–बड़े आयोजनों में श्रोताओं को साधनों से सुख की अनुभूति तो होती है, उनका मनोरंजन भी होता है, किन्तु जो अमृत जीवन के लिए आवश्यक है उससे वे वंचित रह जाते हैं।

इसी प्रकार सिंहस्थ 2016 में करोड़ों की संख्या में दर्शनार्थी पहुंचे और घूम–घूमकर उन्होंने अत्यन्त आकर्षक बड़े–बड़े पाण्डालों को देखकर खुशी जाहिर की, तरह–तरह के करोड़ों रूपयों की लागत से आरामदेह वातानुकूलित भव्य स्थलों में श्रद्धालु वहां की सुन्दरता और भौतिक साधनों का सुख प्राप्त करते, निःशुल्क भोजन का आनन्द लेने जाते रहे जिस प्रकार अन्य मेलों में दर्शनार्थी घूमकर नई–नई वस्तुओं को देखकर आनन्दित होते हैं प्रायः अधिकाशं भक्तों ने वही लाभ लिया। जबकि सिंहस्थ के आयोजन के पीछे ये पवित्र भावना रही होगी कि इतने लम्बे समय तक देश–विदेश के विद्वान, संत–संन्यासी आकर करोड़ों देशवासियों को संगठन, समाज और राष्ट्र हेतु सुख, शान्ति, आत्मोन्नति का अपने प्रवचन, व्याख्यान से बोध कराएंगे, यही एक अवसर होता है जहां एक साथ करोड़ों व्यक्तियों का मार्गदर्शन विद्वान और सन्त कर सकते हैं। इस प्रकार का आयोजन समाज और राष्ट्र को नई दिशा देकर सही सनातन धर्म का महत्व बताते हुए विश्व शान्ति का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। निश्चित रूप से यही कारण सिंहस्थ या कुंभ के आयोजन का रहा होगा। यदि इस भावना के अनुरूप आयोजन किया जाए तो समाज को एक नई दिशा प्राप्त हो सकती है जो मानव समाज के लिए एक बहुत महत्वपूर्ण और लाभदायक है।

प्रशासन ने व्यवस्था की दृष्टि से अत्यन्त सराहनीय व्यवस्था की। हजारों करोड़ रूपए इसमें खर्च हुआ, पर इसका कितना सदुपयोग हुआ इसका भी विचार करना होगा। ज्ञान और नैतिकता प्रदान करने वाले इस कुम्भ में अनेक अवैदिक सनातन विरोधी और नैतिक पतन करने वाले दृश्य

महात्मा, सन्तों और विद्वानों द्वारा करते हुए देखे गए, कुछ ने तो ईश्वर के स्थान पर अपनी स्थापना कर ली, वहां भी अंध विश्वासी भक्तों की भीड़ देखी जा रही थी। नशीले पदार्थों का उपयोग, हिंसात्मक प्रवृत्ति और आपसी विवाद साधुओं में भी चोरी का कृत्य, फिल्मी धुन पर भजनों पर भोण्डा नृत्य भी देखा गया अनेक सन्त महात्मा विद्वाना नें अपनी ओर आकर्षित करने के लिए वस्तुओं के विक्रय हेतु किए जाने वाले आकर्षक विज्ञापन की तर्ज पर सन्तों, विद्वानों, महात्माओं के बड़े बड़े आकर्षक होर्डिंग, पर्चों द्वारा अपना विज्ञापन किया। इसकी क्या आवश्यकता थी ? यह बस विद्वता की गरिमा को गिराते हुए सन्त, साधु, महात्मा ऐसे विज्ञापन करके आकर्षक पाण्डाल और भक्तों की अत्यन्त आधुनिक सुख–सुविधाएं, भोजन प्रदान करके अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास कर रहे थे। वास्तव में ये न तो सन्त है, न साधु हैं, केवल अपने भक्तों की भीड़ बढ़ाकर मात्र लोकेष्णा वित्तेष्णा की पूर्ति का प्रयास करने वाले आध्यात्मिक व्यापारी हैं। संत रैदास, नानक, संत तुलसी, और महा पण्डित चाणक्य के जीवन में सादगी थी, दिखावा नहीं था, यही साधु के लक्षण हैं, किन्तु इसका अभाव देखा गया।

अनेक श्रोताओं ने सनातन धर्म के प्रचार का ऐसा प्रयास आर्य समाज के माध्यम से आयोजित शिविर में होना बताया। जिसमें योग–आसन, प्राणायाम, यज्ञ, भजन, प्रवचन, कवि सम्मेलन, धर्म रक्षा, राष्ट्र रक्षा, समाज रक्षा, मानव रक्षा आदि महत्वपूर्ण विषयों पर आयोजन किए गए साथ ही विचार टी वी सिनेमा हॉल, भारत दर्शन प्रदर्शनी जिसमें अनेक महापुरूषों के चित्र, 50 से अधिक विद्वानों के व्याख्यान जिसे लाखों लोगों ने सुना व सराहा।

अंध विश्वास और अज्ञानता से पूर्ण जनसामान्य आत्मा की पवित्रता क्षिप्रा (जिसमें नर्मदा का जल प्रवाहित हो रहा है) में स्नान करके ही मानता रहा या बड़े–बड़े पाण्डाल और चमत्कारी आभा से पूर्ण तथाकथित महात्माओं के दर्शन करके ही अपने को धन्य मानता रहा, इसका परिणाम मूल से हटकर भौतिक सुख साधनों की चकाचौंध के आस–पास ही श्रद्धालु रह गए। जबकि इस अवसर पर समय और सम्पत्ति का बहुत बड़ा व्यय हुआ है। यदि इसका सदुपयोग हुआ होता, तो समाज को एक दिशा मिलती। सनातन धर्म के मूल रूप को समाज समझ पाता। धर्म, कर्म, समाज और राष्ट्र की मूल भावनाओं का सन्देश जाता। इस कार्य में शासन और जन सामान्य की बहुत बड़ी सम्पत्ति व्यय हुई, इससे राष्ट्र और समाज के प्रति अपने कर्त्तव्यों का बोध होता। किन्तु जन सामान्य परम लक्ष्य से दूर रह गया उसका स्थान मनोरंजन और झांकियों ने ले लिया। इस अंध विश्वास और अज्ञानता के कारण सदुयोग कम और दुरुपयोग अधिक हुआ।

भतृहरि शतक

(नीति शतक)

विपदि धैर्यमथाम्युदये क्षमा, सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः।
प्रशासि चाभिरूचि र्व्यसनं श्रुतौ प्रकृति सिद्ध निदं हि महात्मनम्।।

63 वॉ श्लोक

विपत्ति के समय धैर्य, उन्नति में क्षमा, सभा समिति में वाणी का चातुर्य, युद्ध में पराक्रम, यशा प्राप्ति में अभिरूचि, वेदाध्ययन में आसक्ति आदि गुण श्रेष्ठ पुरूषों में स्वभावतः निवास करते हैं।

शब्दों की उचित अभिव्यक्ति वाणी का संयम कहाती है।

आपसे कुछ कहने का जब हमें ख्याल आया है।
पहले बड़े जतन से, हमने लब्जों को सजाया है।।

सोचिए तो सही .....

आदमी अपनी आयु के पैर कितने ही बढ़ा ले,
कितने ही ग्रंथों का पठन–पाठन कर लें।
वह अन्ततः बालक ही रहता है – बालक
यानि निरीह, आलसी। इसलिए कि
ज्ञान का सागर अनन्त है, कोई भी व्यक्ति
ज्ञान के सागर को आज तक नहीं खरीद सका।

तीन उपयोगी बातें.....

0 युवावस्था में बहुत कुछ करने का संकल्प करें।
0 वार्धक्य अवस्था में मुनिवृत्ति धारण करें।
0 मृत्यु समय में धैर्य धारण करें।

द्वारा – राजेन्द्र व्यास
उज्जैन

"वेद सुधा"

वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है, वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना, सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

– महर्षि दयानन्द सरस्वती

यजुर्वेद अध्याय 16 में 'रूद्र' शब्द को विस्तारपूर्वक समझाया गया है। 'रूद्रदेव' के विभिन्न रूपों का वर्णन है उन्हीं में से यहां कुछ अंश प्रस्तुत किया जाता है। रूद्र अनेक हैं यह द्यौ अन्तरिक्ष तथा पृथ्वी पर विद्यमान हैं यजुर्वेद का यह अध्याय रूद्र अध्याय कहलाता है।

"असंख्याता सहस्त्राणि ये रूद्राऽधि भूम्याम्।" यजु. 16/54

"अस्मिन् महत्यर्णवेऽन्तरिक्षे भवाऽधि" यजु. 16/55

इन रूद्रो के दो रूप हैं – 1. इनका जो कल्याणकारी रूप है, वह शिव कहलाता है। 2. और यही विनाशकारी रूप में रूद्र बन जाते हैं। इस त्रिगुणात्मक प्रकृति से उत्पन्न अर्थात इस सृष्टि का प्रत्येक पदार्थ शिव और रूद्र है। सृष्टि रचयिता ईश्वर के भी यह नाम हैं किन्तु प्राकृतिक पदार्थों के भी है। जब मनुष्य सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ को ज्ञानपूर्वक समुचित रूप से उपयोग में लेता है तो वह रूप शिव हो जाता है, उसके लिए कल्याणकारी हो जाता है। किन्तु जब मनुष्य अज्ञान, अविद्या में फंसकर आसक्ति पूर्वक अनुचित अर्थात दुरूपयोग करता है तब वही पदार्थ रूद्र रूप से उसके लिए विनाशकारी हो जाता है।

ओउम् नमस्ते रूद्र मन्यव उतो त इषवे नमः। बाहुभ्यामुत ते नमः।।

– यजुर्वेद 19/1

अर्थ – हे शत्रुओं को रूलाने वाले, रोगों को नष्ट करने वाले, दुर्गुणों, पापवृत्तियों को भस्म करने वाले प्रभो। आपको हमारा नमस्कार हो।

जैसे – पहले कहा है कि रूद्र असंख्य हैं ईश्वर, राजा, वायु, औषधि, वृक्ष, वैद्य, ऋषि, अर्थात् वैज्ञानिक आदि मन्त्र में असंख्यों पदार्थों का नाम रूद्र बताया है।

यहां पर केवल हम इस सर्वनियन्ता सर्वशक्तिमान ईश्वर का ही ग्रहण करते हैं जब हम कल्याण पथ पर चलते हुए आत्म चिन्तन करते हैं, प्रभु का ध्यान करते हैं। उस समय हमारे अन्दर जो उत्साह होता है, जो साहस की अनुभूति होती है तथा जो शक्ति मिलती है। वह ईश्वर की 'शिव' रूप शक्ति है उसी के माध्यम से मनुष्य मोक्ष मार्ग में गमन करता हुआ यात्रा पूरी कर पाता है अर्थात् शिवलोक (मुक्ति) में पहुंच जाता है।

और जब व्यक्ति रोग, शोक व्यसनों तथा वासना, काम, कोध आदि शत्रुओं के बीच घिर जाता है, जब मुसीबतों के समुद्र में डूबने लगता है। ऐसी स्थिति में सगे संबंधी, रिश्तेदार व सभी मित्र आदि जब मुंह मोड़ लेते हैं तब व्यक्ति कातर

दृष्टि से प्रभु की ओर निहारता है, ध्यान करता है। इस समय जो वैराग्य होता है विषयों के प्रति अनासक्ति हो जाती है, व्यसनों, दुर्गुणों का नाश हो जाता है। यह ईश्वरीय 'रूद्र' शक्ति के माध्यम से होता है और रूद्र शक्ति की सहायता से मनुष्य सब प्रकार की पाप वृत्तियों पर विजय पाकर विजेता बन जाता है। अपनी दुर्बलताओं का नाश करके आत्मबल प्राप्त कर लेता है। तब उस प्रभु 'रूद्र' की सहायता और सुरक्षा में चकवर्ती सम्राट के समान व्यक्ति स्वाभिमान से प्रकाशमान हो जाता है। कोई भी आसुरी शक्ति तिरछी नजर से देखने का साहस नहीं कर सकती। इसलिए हम सब प्रभु का ही आश्रय लेवें।

सुरेशचन्द्र शास्त्री
उपदेशक
म. भा. आर्य प्रतिनिधि सभा, भोपाल

हँसो और हँसाओ

एक बार एक अंग्रेज और एक हिन्दुस्तानी रेल की प्रथम श्रेणी के डिब्बे में यात्रा कर रहे थे। अंग्रेजों को भारतीयों से नफरत प्रसिद्ध ही है। जब हिन्दुस्तानी सो गया तो अंग्रेज ने उसकी जूती उठा के फेंक दी। फिर अंग्रेज के सो जाने पर हिन्दुस्तानी ने उसका कोट उठाकर बाहर डाल दिया।

अंग्रेज ने जब हिन्दुस्तानी से पूछा कि मेरा कोट कहाँ गया, तो उसने चट से जवाब दिया। "तुम्हारा कोट हमारी जूती ढूँढ़ने गया है।"

0 0 0

कैदी जेलर से – आपके रहते हुए मुझ पर एक संकट है।
जेलर – मेरे रहते तुम्हें क्या संकट, कैसी विपत्ति ?
कैदी – यही कि भागने का रास्ता नहीं मिलता।

0 0 0

मुसाफिर – (एक मनुष्य से) क्यों भाई, यह रास्ता मेरे गाँव चला जाएगा ?
मनुष्य – भाई, रास्ता तो यहीं रह जाएगा, शायद तुम अपने गाँव को चले जाओ।

बोध कथा

अपनी महानता को पहचानो

"जिस प्रकार सूर्य आकाश में छिपकर नहीं रह सकता, उसी प्रकार महापुरूष भी संसार में छिपकर नहीं रह सकता।" **महाभारत**

आसाम के घने जंगलों के बीच एक पत्थर की गुफा थी। उस गुफा में एक शेर का परिवार रहता था। उस परिवार में एक छोटा बच्चा भी था। जो एक दिन अपनी गुफा से बाहर निकल आया। उस समय उसके माता–पिता यानि शेर और शेरनी व अन्य सदस्य भोजन की तलाश में बाहर गये हुए थे।

तभी उस बच्चे को अपने सामने की तरफ से भेड़ों का एक झुण्ड आता हुआ दिखाई पड़ा। जब वह झुण्ड पास आया, तो उस बच्चे की दृष्टि एक भेड़ के स्तनों पर पड़ी। वह बच्चा उस वक्त भूख से अत्यन्त व्याकुल था। इसलिए वह तुरन्त दौड़कर उस भेड़ के पास आया और उसका दूध पीने लगा।

उसे उस भेड़ के दूध में और अपनी माँ शेरनी के दूध में कोई अन्तर नजर नहीं आया, क्योंकि उसे उस वक्त बहुत अधिक भूख लगी थी। वह शेर का बच्चा उस भेड़ का दूध पीते हुए उसके झुण्ड में शामिल हो गया और उन्हीं के साथ चला गया।

भेड़ों के बीच रहकर वह शेर का बच्चा भी अपने को भेड़ समझने लगा। समय बीतने पर जब वह कुछ सयाना हुआ, तो भेड़ों के माहौल के बीच में पलकर वह शेर का बच्चा भी भेड़ों जैसा ही व्यवहार करने लगा। समय बीतता गया शेर का बच्चा बड़ा हो गया।

एक दिन उस झुण्ड की सभी भेड़े जंगल के एक स्थान पर घास चर रही थीं। वह शेर भी वहीं था। तभी अचानक एक अन्य शेर उस झुण्ड की भेड़ों के सामने आ गया। उस शेर ने आते ही दहाड़ना शुरू कर दिया। उस शेर की दहाड़ सुनते ही उस झुण्ड की सारी भेड़ें भाग खड़ी हुई। किन्तु उनके साथी शेर ने वहां से भागने की तनिक भी कोशिश नहीं की, क्योंकि उस शेर की दहाड ने उसे अपनी शक्ति का अहसास करा दिया था। शेर की आवाज और उसके व्यवहार ने उस युवा शेर के अन्दर स्वाभिमान की ज्वाला जागृत कर दी थी। वह भी उसी शेर की तरह दहाड़ने लगा और गरजते हुए जब उस दूसरे शेर के पास पहुंचा, तो वह दूसरा शेर तुरन्त दुम दबाकर वहां से भाग निकला।

इस कहानी के माध्यम से बताया गया है कि स्वाभिमान अर्थात महानता अन्दर की वस्तु है। उपरी दिखावे से उसका कोई संबंध नहीं। हमारे समाज में बहुत से लोग उसी शेर के बच्चे के समान हैं, जिन्होंने अपनी महान शक्तियों को भुलाकर भेड़ों जैसी मनोवृत्ति बना रखी है। यह कहानी इन सभी लोगों को यह प्रेरणा देती है कि, जैसा माहौल होता है, उसी के अनुरूप व्यक्ति का व्यवहार होता है। अगर आप कामयाब लोगों के साथ रहते हैं तो आप भी वैसा ही बनने का प्रयास करेगें। अगर आप नकारात्मक लोगों के बीच रहेगें तो आप स्वयं भी नकारात्मक ही सोचेगें।

पं. मोतीलाल नेहरू, गायत्री मन्त्र और महर्षि दयानन्द

– पं. मनुदेव अभय "विद्यावचस्पति"

गायत्री मन्त्र को महामन्त्र कहा जाता है, परमात्मा के स्वरूप को दर्शाते हुए इसमें उत्तम बुद्धि की कामना की गई है। सबसे श्रेष्ठ व बड़ा बल बुद्धिबल होता है, इसीलिए इस मन्त्र को महामन्त्र कहा जाता है।

महर्षि दयानन्द के द्वारा सर्वप्रथम इस मन्त्र को जातिवर्ग के भेदभाव से हटकर प्राणीमात्र को इसे सुनने, बोलने का अधिकार प्रदान कर एक महान कार्य किया। इसके पूर्व गायत्री मन्त्र जिसे गुरू मन्त्र कहा जाता था, जो सुनने व बोलने का अधिकार एक वर्ग तक सीमित था।

दिवंगत पं. मनुदेव अभय "विद्यावाचस्पति" द्वारा पंडित मोतीलाल नेहरू व गायत्री मन्त्र के सन्दर्भ में लिखा गया लेख प्रस्तुत है।

महर्षि दयानन्द ने गायत्री मन्त्र सबको सिखाया करते थे। संस्कारविधि में महर्षि दयानन्द लिखते हैं – सन्यस्त होने के पश्चात स्वाध्याय निरन्तर होता रहना चाहिए। ईश्वर स्तुति, प्रार्थना, उपासना आदि में प्रमाद न हो तथा स्वाध्याय में अनाध्याय न हो। इन समस्त प्रमाणों से सिद्ध होता है कि महर्षि दयानन्द और उनके गुरू विरजानन्द गायत्री मन्त्र पर अगाध श्रद्धा रख सबको गायत्री मन्त्र का जाप करने का उपदेश दिया करते थे। उनके इस कार्य का सटीक उदाहरण इस प्रकार है –

जिन दिनों स्वामी श्रद्धानन्द गुरुकुल कांगड़ी के सर्वेसर्वा थे, तब एक बार गुरूकुल के वार्षिकोत्सव पर उन्होंने पं. जवाहरलाल नेहरू के पिता श्री पंडित मोतीलाल नेहरू को मुख्य अतिथि के रूप में आमन्त्रित किया। पं. मोतीलालजी नेहरू ने अपनी स्वीकृति दे दी तथा निश्चित समय पर गुरूकुल पधार गये। निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार उन्हें मंच पर व्याख्यान के लिए आहूत किया गया। उन दिनों गुरूकुल कांगड़ी का उत्सव जन आकर्षण का केन्द्र होता था। सभा में बहुत बड़ी संख्या श्रोताओं की थी। माननीय प्रमुख वक्ता पं. मोतीलाल नेहरू ने मंच पर खड़े होकर सर्वप्रथम गायत्री मन्त्र का विधिवत उच्चारण किया, तत्पश्चात उन्होंने अपना सारगर्भित भाषण दिया। हम यहां उनके भाषण का उल्लेख या समीक्षा करना नहीं चाहते, अपितु उन्होंने गुरूकुल मन्त्र से गायत्री मन्त्र के शिक्षक गुरू महर्षि दयानन्द के संबंध में जो सत्य घटना सुनाई, उरासे उपस्थित सभी श्रोतागण भाव–विभोर हो उठे।

पं. मोतीलाल नेहरू ने एक अति महत्वपूर्ण रहस्य का उद्घाटन किया। उन्होंने कहा –

यह बात उन दिनों की है, जब महर्षि दयानन्द आगरा में एक महाविद्यालय के निकट प्रांगण में स्थित बगीचे में ठहरे हुए थे। हम 15–20 युवक प्रतिदिन दोपहर पश्चात फुटबॉल खेलने जाया करते थे। सायंकाल खेल समाप्ति के पश्चात एक दिन मैं अपने कुछ साथियों के साथ बगीचे में ठहरे, सन्त (महर्षि दयानन्द) की कुटिया चला गया और श्रद्धा सहित प्रणाम कर सामने बैठ गया। हमारे आगमन की सूचना पाकर स्वामी जी भी बाहर रखे तख्त पर आकर विराजमान हो गये। हम सब लोगों ने उनसे कुछ उपदेश देने की प्रार्थना की। उन्होंने कहा – मैं उपदेश देने के पूर्व आप लोगों से कुछ चर्चा करना चाहता हूं। युवकों के समूह में मैं ही सबेसे आगे बैठा था। स्वामीजी ने मेरा नाम, धाम और काम पूछा। मैंने सब कुछ सही–सही बता दिया। उन्होंने प्रत्युत्तर में कहा –

युवक तुम ब्राह्मण बालक प्रतीत होते हो ?

मैंने कहा – हां स्वामी जी, मैं कश्मीरी ब्राह्मण हूं और यहां पढ़ने आया हूं।

स्वामी जी ने प्रतिप्रश्न किया – ब्राह्मण बालक होने के कारण क्या तुम्हें 'गायत्री मन्त्र' याद है ?

यह प्रश्न सुनकर मैं निरुत्तर हो गया। यद्यपि मेरा पूर्व में यज्ञोपवीत संस्कार हो चुका था और पुरोहित जी ने सम्भवतः गायत्री मन्त्र उच्चारित भी कराया था। किन्तु न तो मुझे याद रहा और न पुरोहितजी ने इसके विषय में कभी मुझसे पूछा।

स्वामीजी से नम्रमापूर्वक सिर झुकाते हुए शर्मीले ढ़ंग से कह दिया – नहीं, स्वामी जी मुझे गायत्री मन्त्र नहीं आता है। मैं पूरी तरह भूल गया हूं।

पूजनीय स्वामीजी यह सुनकर मुस्करा दिये। उन्होंने एकबार हम सब युवकों को दृष्टि भर कर देखा और फिर सोचा। उन्होंने मुझसे पूछा – क्या तुम गायत्री मन्त्र सीखना चाहते हो ? मैंने तत्काल उत्तर दिया हां, स्वामीजी महाराज, मुझे गायत्री मन्त्र की दीक्षा देने की कृपा करें।

पं. मोतीलाल नेहरू यह कहते हुए श्रद्धावश थोड़े भावुक हो उठे। श्रद्धालु की भावना का सत्कार करते हुए उन्होंने आगे कहना शुरू किया। इसके पश्चात ऋषिवर दयानन्द ने मुझे पद्मासन लगा कर बैठने के लिए कहा। में तत्काल उचित आसन लगा कर उनके सम्मुख बैठ गया। स्वामीजी के मुख मण्डल का इतना तेज था कि उनसे ऑख से ऑख मिलाकर बैठना अति कठिन था। फिर उन्होंने मुझे नमस्ते की मुद्रा में नेत्र बन्द कर, दोनों हाथ जोड़कर ह्रदय के निकट लाने के लिए कहा। मेरे द्वारा यह सब करने के पश्चात ऋषि ने गायत्री मन्त्र धीरे–धीरे बोलकर उसे दोहराने के लिए कहा। मैंने वैसे ही किया। उन्होंने मुझे गायत्री मन्त्र के अर्थ को भी समझाया। मुझे स्मरण है मैं स्वामीजी के निकट लगातार 3–4 दिन तक आता रहा और उन्हें मौखिक रूप से गायत्री मन्त्र सुनाता रहा। मेरे इस क्रम का मेरे साथियों पर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ा। फिर एक दिन एकाएक स्वामीजी कहीं अन्य नगर हेतु प्रस्थान कर गये। इसलिए मैं महर्षि दयानन्द को अपना दीक्षा गुरु मानता हूं।

महर्षि दयानन्द और गायत्री मन्त्र की इस रहस्यपूर्ण बातों को सुनकर मंच पर उपस्थित सब विद्वान तथा विशाल जनसमुदाय के लोग जरा जोश में आये और उन सभी ने मिलकर महर्षि दयानन्द की जय का उद्घोष किया। इस उद्घोष लगाने वालों में पं. मोतीलाल नेहरू स्वयं भी थे।

इस प्रकार महर्षि दयानन्द, गायत्री मन्त्र को सदैव अति महत्व दिया करते थे। किन्तु उसके चमत्कारवाद तथा किराये से जप अनुष्ठान कराये जाने का सदैव विरोध किया करते थे। उन्होंने अपने समस्त ग्रंथों में यन्त्र–तन्त्र प्रसंगानुसार गायत्री मन्त्र की व्याख्या की है। इन्हीं भावनाओं के अनुरूप आर्य समाज गायत्री मन्त्र को स्वीकार करता है, जो कि स्तुत्य है।

अथर्ववेद की सूक्तियाँ

1. **तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः।**
   उस सबसे महान प्रभु के लिए नमस्कार हो।

2. **तस्य ते भक्तिवांसः स्याम।**
   हे प्रभो ! हम तेरे सच्चे भक्त बनें।

3. **स नः पर्षदति द्विषः।**
   ईश्वर हमें द्वेष–भावों वा शत्रुओं से अलग रखे।

4. **स एष एक वृदेक एव।**
   वह ईश्वर निश्चय से एक ही है।

5. **संश्रुतेन गमेमहि।**
   हम वेद की आज्ञा के अनुसार चलने वाले हों।

6. **मा श्रुतेन विराधिषि।**
   मैं कभी वेद–शास्त्र से अलग न होऊं, उसके विपरीत न चलूं।

7. **स नो मुंचत्वहंसः।**
   वह प्रभु हमें पाप से छुड़ा देवे।

8. **तमेव विद्वान न विभाय मृत्यांः।**
   आत्मा, वा परमात्मा को जानकर मनुष्य मौत से नहीं डरता।

यज्ञ

– आचार्य ज्ञानेश्वार्य, रोजड़

प्रश्न 296 : यज्ञ को श्रेष्ठतम कर्म क्यों कहा गया है ?

उत्तर : थोड़े से धन, थोड़े से साधन तथा थोड़े से समय में हजारों प्राणियों को जीवनदायी, रोगनाशक भेषज (औषधीय) वायु की प्राप्ति होती है। इसलिए यज्ञ को श्रेष्ठतम कर्म कहा गया है।

प्रश्न 297 : छोटे से यज्ञ कुण्ड में थोड़े से घी व सामग्री से गांवों, नगरों में फैला भयंकर प्रदूषण कैसे दूर हो सकता है ?

उत्तर : जैसे थोड़े से पोटेशियम साईनाइट से सैकड़ों, हजारों व्यक्तियों का जीवन नष्ट हो ज़ाता है वैसे ही थोड़े से घी, सामग्री से सैकड़ों हजारों व्यक्तियों को जीवन मिलता है।

प्रश्न 298 : अगरबत्ती, धूप, इत्र, सेन्ट, फूल आदि से वातावरण को शुद्ध किया जा सकता है तो फिर यज्ञ की क्या आवश्यकता है ?

उत्तर : अगरबत्ती आदि से मात्र सुगन्धी उत्पन्न होती है किन्तु रोगों के कीटाणु नष्ट नहीं होते हैं। न वायु शुद्ध होती है।

प्रश्न 299 : क्या यज्ञ करने से यज्ञकर्ता की सभी मनोकामना पूरी होती है ?

उत्तर : यज्ञ के साथ पुरूषार्थ भी अपेक्षित है, मात्र अग्निहोत्र से मनोकामना पूर्ण नहीं होती है।

प्रश्न 300 : क्या यज्ञकर्मा को यज्ञ करते समय विशेष वस्त्रों को धारण करना चाहिये ?

उत्तर : यह आवश्यक नहीं है, चाहे तो कर सकते हैं।

प्रश्न 301 : क्या अपने व्यक्तिगत यज्ञ को किसी अन्य व्यक्ति को सौंपकर उससे करवा सकते है ?

उत्तर : हॉ, यदि समय न हो तो अन्यों से करवा सकते हैं किन्तु व्यक्तिगत यज्ञ करने से जो लाभ होते हैं, वह नहीं मिल पाते हैं।

प्रश्न 302 : यज्ञ से पूर्व संकल्प पाठ क्यों करते हैं ?

उत्तर : काल गणना करने के उद्देश्य से संकल्प पाठ किया जाता है। यज्ञ कर्ता शुभ कर्म कर रहा है ऐसी भावना भी मन में उत्पन्न होती है।

प्रश्न 303 : दीपक को वेदी के उत्तर में तथा जल को पूर्व दिशा मे क्यों रखा जाता हैं?

उत्तर : यह मात्र एक व्यवस्था है, सुविधा के लिए।

प्रश्न 304 : क्या यज्ञ द्वारा इच्छित समय एवं इच्छित स्थान पर वर्षा करायी जा सकती है या अधिक वर्षा को बन्द या कम किया जा सकता है ?

उत्तर : हॉं, ऐसा विधान शास्त्रों में है, किन्तु वर्तमान में इस विद्या के जानने वाले कम हैं।

प्रश्न 305 : क्या अग्नि जलाने के लिए लकड़ी के स्थान पर गोबर के कण्ड़ों का प्रयोग किया जा सकता है ?

उत्तर : अग्नि जलाने के लिये लकड़ी के स्थान पर गोबर के कण्ड़ों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

प्रश्न 306 : कौन व्यक्ति यज्ञ कर्म को छोड़ सकता है ?

उत्तर : सन्यासी विरक्त व्यक्ति को यज्ञ करना आवश्यक नहीं होता है क्यों उनका जीवन ही यज्ञमय होता है।

प्रश्न 307 : क्या यज्ञ करने से शारीरिक, मानसिक रोग भी दूर होते हैं ?

उत्तर : हॉं। यज्ञ करने से शारीरिक मानसिक रोग भी दूर होते हैं।

प्रश्न 308 : क्या मन्त्रों के अर्थों को जाने बिना भी यज्ञ करने से लाभ होता है ?

उत्तर : मन्त्रों के अर्थों को जाने बिना भी यज्ञ करने से भौतिक लाभ तो होगा ही, किन्तु मन्त्रों के अर्थों को जानकर जो मानसिक, बौद्धिक लाभ होता है वह नहीं होगा।

प्रश्न 309 : क्या बिना ही घी के, बिना ही सामग्री के यज्ञ हो सकता है ?

उत्तर : हॉं, यदि घी या सामग्री उपलब्ध न हो तो अन्य पदार्थों से यथा औषधि, अन्न, वनस्पति आदि से भी यज्ञ किया जा सकता है।

प्रश्न 310 : यज्ञ कुण्ड में बची राख का क्या उपयोग होता है ?

उत्तर : राख को खेत, खलिहान, उद्यान, फूलों, फलों, सब्जियों के स्थान पर डालना चाहिए। यह एक उत्तम खाद का कार्य करती है।

प्रश्न 311 : यज्ञ एक भौतिक कार्य है तो इसके साथ ईश्वर स्तुति प्रार्थना उपासना के मन्त्रों को क्यों बोला जाता है ? वेद मन्त्रों को बोलने की क्या आवश्यकता है ?

उत्तर : इससे ईश्वर के प्रति श्रद्धा, विश्वास, प्रेम उत्पन्न होता है तथा कृतज्ञता भी प्रकट होती है एवं प्रेरणा भी मिलती है।

प्रश्न 312 : क्या यज्ञ में पशु बलि, पक्षी बलि, या मांस, शराब, आदि प्रदान करने का विधान है ?

उत्तर : नहीं, यज्ञ को हिंसा रहित कर्म कहा गया है। इसमें मांस आदि अपवित्र हिंसा युक्त पदार्थों को प्रदान नहीं किया जाता है।

क्रमशः.................

किसे सुनाऊं व्यथा हृदय की,

किसे सुनाऊं व्यथा हृदय की,
यहां तो सब सोए पड़े हैं।
कर्मवीरों की भूमि में,
अकर्मण्यता के जबसे पड़े हैं।।

जगाऊ कैसे नीन्द से,
जो जानबूझ कर सो रहे हैं।
अपने ही आंगन में खुद,
बबूल समझकर भी बो रहे हैं।।

चिन्तन–मनन आचार–विचार जो,
दोहरा रहे उन कर्मों, सब छोड़ चुके हैं।
भूला रहे उन कारणों को,
जिनसे वर्षों लुटे हैं।।

मानुषता का कद छोटा पर,
अमानुषता के कद बड़े हैं।
किसे सुनाऊ व्यथा हृदय की..........

अर्थी निकाल इन्सानियत की
इन्सान कहला रहे,
जर्जर खण्डहर में बैठकर
मन अपना बहला रहे।

चेतन्य समाज को छोड़,
अब तो कफन के लिए भी विवाद है।
स्वार्थ, संकीर्णता, धोखे पाखण्ड से घिरी,
ये कैसा समाजवाद है,
सेवा शुभ कार्यों से हाथ पीछे,
और अत्याचार की ओर बढ़े हैं।
किसे सुनाऊ व्यथा हृदय की............
लुट गए लुटते जा रहे पर,
अभी भी गाफिल से खड़े हैं।
कर्म छोड़ पुरुषार्थ खो,
भाग्य की अंगूठी में जड़े हैं।।

तमाम नैतिकता की बातें,
इतिहास बनकर रह गई है।
बुजदिलाना माहौल में पलकर,
बिल्ली भी चूहे से डर रही है।।

नीचे से ऊपर तक इसी रंग में,
रंग गए हैं।
किसे सुनाऊ व्यथा हृदय की..............

जीवन का उत्थान अपने तक,
सिमटकर रह गया।
सर्वे भवन्तु का सपना,
स्वार्थ सिन्धू में बह गया।।

मैं भ्रमित सा दिशा विहीन
हवा में उड़ता रहा।
हवा के रूख के साथ ही
अपना रूख बदलता रहा।।

इसलिए आज बिना पहचान के खड़ा हूं,
हां ना के द्वन्द में घिरा पड़ा हूं।

काश लक्ष्य बना जीवन बिताता,
तो आज कोई मुकाम जरूर पाता।

बिना लक्ष्य जो जीवन बिताते हैं,
वे अपने आप से पीछे छूट जाते हैं।
इसलिए जीने का मकसद, एक राह,
पुरुषार्थ और जीने का अन्दाज जरूरी हैं।

वर्ना जिन्दगी सारी अधूरी है,
जिन्दगी पाकर भी जिन्दगी से दूरी है।

–प्रकाश आर्य, महू

वेदों की दृष्टि में धर्म का स्वरूप

हमने "धर्म" और 'संस्कृति' शब्दों के मूल अर्थ को नष्ट कर दिया है। हमने सब मतों, मजहबों, सम्प्रदायों, पन्थों, मान्यताओं या दृष्टिकोणों को धर्म मानना शुरू कर दिया है। जबकि धर्म तो केवल कोई एक ही हो सकता है और वह भी वही हो सकता है जो सभी को स्वीकार करने योग्य हो, इसलिए वेद में कहा गया है –

सा प्रथमा संस्कृतिः विश्ववारा।

(यजुर्वेद 7/14)

वह प्रथम संस्कृति ही विश्व के समस्त मानवों के लिए वरणीय है।

तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।

(ऋग्वेद 10/90/16)

धर्म के वे अंग–सत्य, संयम, सदाचार, न्याय, दया, क्षमा, परोपकार व अहिंसा आदि शाखा–प्रशाखा के रूप में सर्वप्रथम वेदों में ही वर्णित हैं। संस्कृत साहित्य में विलोम शब्द के रूप में दो शब्दों की जोड़ी सुप्रसिद्ध है – नूतन व पुरातन। कोई मत या मजहब किसी अन्य मत या मजहब की अपेक्षा नूतन होता है तो कोई पुरातन। वैदिक धर्म सनातन है।

किन्तु सृष्टि के प्रारम्भ से निरन्तर प्रवाहित होती आ रही वैदिक धर्म की यह अजस्त्र धारा गंगा की तरह गंगोत्री से निकलकर आज तक सर्वजनहिताय तथा सर्वजनसुखाय है। यह वैदिक धर्म सार्वजनीन, सार्वकालिक, सार्वभौमिक एवं अजातशत्रु है जो निर्विकार एवं निर्दोष होने के कारण समस्त विश्व का सर्वथा शोधन करता है। यही धर्म विश्ववरणीया संस्कृति भी कहलाती है। जब धर्म वैदिक न रहकर अन्य किसी मतपरक विशेषणों से जुड़ने लगता है तो उस समय मौलिक धर्म की उत्कृष्टता अपने आप समाप्त होने लगती है तथा वह तथाकथित धर्म, संकीर्ण, भाव वाला होकर अपने अनुयायियों को सच्ची मानवता से दूर भी करता है।

धर्म निरपेक्षता की अनर्गल व्याख्या ने ही कुकुरमुत्तों की तरह जगह जगह पर उग आए आधुनिक समस्त मत–सम्प्रदायों, पन्थों एवं मजहबों को उदारता एवं समझौतावाद के कारण धर्म और संस्कृति का जामा पहना दिया है। जिसका परिणाम वर्तमान में हम देख रहे हैं–सर्वत्र धार्मिक विद्वेष, साम्प्रदायिक कट्टरता, मजहबी उग्रवाद, अधिक स्वायत्तता की मांगें व युद्ध विभीषिका। इस प्रकार का तथाकथित धर्म स्वयं को उत्कृष्ट एवं अन्य को गर्हित, हेय व अधम मानता है। ऐसी बात नहीं है कि वैदिक धर्म से पृथक अपनी सत्ता रखने वाले अन्य मतों व मजहबों में कोई अच्छी बात है ही नहीं अपितु इन सभी मतों में जो करूणा, ममता, उदारता, सहानुभूति, सदाचार, अहिंसा आदि गुण हैं वे प्रशंसनीय हैं। समाजों व राष्ट्रों में देश, काल तथा व्यक्ति की प्रवृत्ति के अनुसार खान–पान, रहन–सहन, लोकाचार व पूजा–पद्धतियों में भिन्नता होना स्वाभाविक है, परन्तु उन से धर्म की भिन्नता कदापि नहीं हो सकती।

धर्म सब का एक ही होता है। अध्यात्म से ओत–प्रोत जीवन सत्य, धैर्य, क्षमा, इन्द्रिय–नियन्त्रण, स्वाध्याय, दानकर्ता, परमार्थ, यज्ञमयता, उदारता, पक्षपातहीन, न्याय, अप्रमाद, कर्तव्यपरायणता, उदात्तता, तपस्या, साधना, सन्तोष, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह आदि गुण धर्म के वे शाश्वत अंग हैं जो इन्सान को दानवता से बचाते हुए मानव बनाए रखते हैं। इन्हीं धार्मिक गुणों से एक स्वस्थ समाज व विशाल राष्ट्र की स्थापना हो पाती है।

वैदिक ऋचाएं धर्म को ध्रुव विशेषण से जोड़कर उस की अक्षरता को दर्शाते हुए निश्चित सिद्धान्तों व आचरण के नियमौं की ओर संकेत करतीं हैं –

मित्रावरूणौ त्वोत्तरतः परिधत्तां ध्रुवेण धर्मणा विश्वस्यारिष्टयै।

(यजु. 2/3)

वस्तुतः धर्म एवं संस्कृति आदिकाल से चले आ रहे वे शाश्वत मानवीय कर्तव्य हैं जो अनिवार्य रूप से पालन किये जाते हैं। इस धरा के महर्षियों की अमरवाणी केवल इसी लोककल्याण कारिणी धर्म–ध्वनि का ही उच्चारण करती रही है – **धर्मादर्थश्च कामश्च** अर्थ और काम की प्राप्ति धर्मपूर्वक ही करनी चाहिए।

उपनिषत् के ऋषि ने भी धर्म की सार्थकता को लोकोन्नति में ही देखा है। उसने कहा – **त्रयो धर्मस्कन्धाः यज्ञो अध्ययनं दानम्।** (छान्दोग्य उपनिषद् 2/23/1) यज्ञ, अध्ययन एवं दान के माध्यम से उस ने धर्म का व्याख्यान करने का प्रयास किया है। यज्ञ धर्म का पहला अंग है।

सभी श्रेष्ठ कर्म यज्ञ कहलाते हैं अतः कोई भी अच्छा कार्य करने वाला व्यक्ति सच्चा धार्मिक होता है। अध्ययन जीवन को उत्थान की ओर ले जाता है। इसलिए स्वाध्यायप्रेमी व्यक्ति भी धर्म का पालन माना गया है। दान धर्म का वह पड़ाव है जिस से व्यक्ति मानवता से देवत्व की ओर कदम रखता है।

– डॉ. विक्रम कुमार विवेकी

अशफाकुल्ला खान

"जाऊँगा खाली हाथ मगर ये दर्द साथ ही जायेगा, जाने किस दिन हिन्दोस्तान आजाद वतन कहलायेगा ? बिस्मिल हिन्दू है कहते हैं "फिर आऊँगा, फिर आऊँगा, फिर आकर के ऐ भारत मॉं तुझको आजाद कराऊँगा, जी करता है मैं भी कह दूं पर मजहब से बंध जाता हूं, मैं मुसलमान हूं, पुर्नजन्म की बात नहीं कर पाता हूं, हॉं खुदा अगर मिल गया कहीं अपनी झोली फैला दूंगा और जन्नत के बदले उससे एक पुर्नजन्म ही मागूंगा।"

विदेशियों की दृष्टि में गाय

अमेरिका देशवासी टेनेसी प्रान्त के भूतपूर्व गवर्नर श्री मालकम आर. पेटसन लिखते हैं –

महाकवि होमर ने युद्ध, वरजिल ने आयुध, होरेस ने प्रेम, दान्ते ने नरक और मिल्टन ने स्वर्ग का गीत गाया, परन्तु मुझमें यदि इन सब सिद्ध कवियों की सम्मिलित प्रतिभा होती और मेरे हाथ में हजार तारों का मानपूरा होता तथा सारा संसार श्रोता बनकर सुनता तो मैं अपना हृदय खोलकर गौ का गीत गाता, उसके गुण बखानता और उसकी महिमा का गान यावच्चन्द्र दिवाकर अमर कर देता।

यदि मैं मूर्तिकार होता और संगमरमर नामक पत्थर में टांकी से अपने विचार मूर्तिकमान कर सकता तो संसार की सब पत्थर की खाने छानकर विमलतम शुभ्रतम संगमरमर की पटियाँ ढूँढ लाता और चन्द्र ज्योत्सना से पुलकित, निरभ्र नील आकाश से मण्डित, किसी मनोहर वन में निर्मल जल के समीप, पक्षियों के मधुर गुंजन के बीच बैठकर अपने प्रेम धर्म के पवित्र कर्म में लग जाता। उस शीतल संगमरमर का सारा खुरदरापन अपनी छेनी से छीलकर उसे इतना कोमल बना लेता कि उसमें से मेरे मन की गौ की मूरत निकल आती। उसके विशाल करूणामय नेत्र होते, वह अपने उभरे स्तनों में भरा हुआ पुष्टिकर पेय पान कराने की प्रतीक्षा में खड़ी और प्रेम से अमृत के नेत्र वालों को सुख, आरोग्य एवं बल का आशीर्वाद देती दिख पड़ती। गौ गाना–ताज की महारानी है। उसका राज्य सारी पृथ्वी पर है। सेवा उसका विरद है और जो कुछ लेती है, उसे सौ गुना करके देती है।

यदि आज संसार की गौएं मर जायें तो कल ही मानव जाति पर भयानक संकट आ पड़े। रेल की सड़कें, बैंक, कपास की फसल इन सबके बिना हम लोग मजे में अपना काम चला सकते हैं, परन्तु गौ के बिना मानव जाति रोग, क्षय और अन्त में विनाश को प्राप्त होगी। गौ का हम वह सम्मान और स्तवन करें जिनके वह योग्य है। मुझे आशा है कि ज्यों–ज्यों हम लोग ज्ञान के क्षेत्र में आगे बढ़ेगें, कूरता और स्वास्थपरता छोड़ेंगें, त्यों–त्यों उन गौओं की हत्या करना और उनका मॉस खाना भी छोड़ देगें, जो हमें बल देती, सुख पहुंचाती और हमारे बच्चों के प्राण बचाती है।

मि. राल्फ. ए. होने का कथन है – जो व्यक्ति अपने बाल–बच्चों को दूध मलाई और मक्खन जैसे आरोग्यवर्धक पदार्थ खाने को नहीं देता, उसे जेल में बन्द रखने की जरूरत है।

आगे वे फिर कहते हैं –

यदि आप अपनी सन्तानों को शक्तिशाली बनाना चाहते हैं तो उन्हें गाय का दूध और मक्खन रोज तीन बार खाने को दीजिये।

दक्षिण भारत तथा गुजरात में आजकल दिन में कम से कम 25 बार चाय पिलाई जाती है, दूध तो एक बार भी नहीं मिलता। 90–95 फीसदी बच्चे तो

गर्भावस्था से ही चाय के आदी होकर आते हैं। सत्कार के लिए भी आज चाय पेश की जाती है। चाय रूपी भयंकर विष से आज देश विनष्ट हो रहा है।

फ्रेंक ओ. लोडेन लिखता है – शताब्दियों से कथाओं और उपन्यासों में वर्णित यौवन के उद्गम की खोज मनुष्य कर रहा है, पर उस आदर्श यौवन का निकटतम सानिध्य रखने वाला जो पदार्थ अब तक मिल सका है, वह गौ का दुग्ध स्तन है।

डॉ. एच. डी. के. डाइरेक्टर ऑफ नेशनल इन्स्टीट्यूट फार रिसर्च इन डेयरिंग (इंग्लैण्ड) लिखते हैं –

राष्ट्र के स्वास्थ्य में यदि सुधार करना है तो दुग्धापान का और दूध से बनी चीजों के अधिक से अधिक व्यवहार का पर्याप्त प्रचार करना चाहिए।

प्रो. एम. जे. ऐसेनो (हारवर्ड मेडिकल स्कूल) कहते हैं –

दूध ही एकमात्र पदार्थ है, जो समस्त पौष्टिक द्रव्यों से परिपूर्ण हैं और जिसे हम पूर्ण भोजन कह सकते हैं। बढ़ते हुए बच्चों के लिए उत्तमता में इससे बढ़कर कोई चीज नहीं। शरीर को ठीक तरह से बढ़ाने और पुष्ट करने में दूध की बराबरी करने वाला कोई दूसरा पदार्थ नहीं है।

अमेरिका के प्रेसीडेंट हर्बर्ट हूवर लिखते हैं – श्वेत जाति के लोगों का भाग्य उनकी गायों के साथ दृढ़ रूप से संकलित है। दुग्धान्नों के बिना वे कभी भी जीवित नहीं रह सकेगें।

डॉ. ई. बी. मैककालग (अमेरिका) लिखते हैं –

जिन लोगों ने कुछ नाम कमाया है, जो अत्यन्त बली और वीर हुए हैं, जिनके समाज में बाल मृत्यु की संख्या बहुत घट गई है, जिन्होंने संसार में व्यापार धन्धे पर अधिकार किया है, जो साहित्य, संगीत कला का आदर करते हैं तथा जो विज्ञान और मानव बुद्धि की प्रत्येक दिशा में प्रगतिमान हैं, वे ऐसे लोग हैं जिन्होंने गाय के दूध और दूध से बने पदार्थों का स्वच्छन्दता से उपयोग किया है।

श्री मिलो हेस्टिंग्स (रूस) लिखते हैं –

गाय ही सभ्य मानव समाज की धाय है। किसी भी देश की सभ्यता की उन्नति का अनुमान करने के कई साधन बताये जाते हैं। कहीं लोग पुस्तकों पर से ही मानव सभ्यता की कल्पना करते हैं, कहीं धम मन्दिरों को ही प्रधानता दी जाती है, तो कहीं बेलों की वृद्धि ही इसका मूल आधार बताया जाता है। किन्तु गाय द्वारा ही संस्कृति का अनुमान लगाया जा सकता है। हमारी सभ्यता तो गौ प्रधान सभ्यता ही है। जहां गौ वंश उन्नत न हो वहां श्वेत जाति की गुजर नहीं हो सकती।

हम चाहते हैं कि रूस में यान्त्रिक हल और गाय का विशेष रूप से प्रचार हो। यदि इन दो विषयों की उन्नति करने में रूस यभ लाभ करे तो रूस को एक स्थायी संस्कृति के प्रवर्तक का पद गौरव प्राप्त हुए बिना नहीं रह सकता। दुग्ध व्यवसाय की उन्नति के द्वारा हम आनन्द, मेधा शक्ति और समृद्धि प्राप्त कर सकते हैं। मानव जीवन और सभ्यता का दूध के साथ एक विशेष प्रकार का संबंध है।

यूरोप में दुग्ध व्यवसाय में अग्रणी देश डेनमार्क, हालैंड और स्विटजरलैंड हैं। इनमें से एक देश राष्ट्र संघ का केन्द्र बना है और दूसरा सब राष्ट्रों के न्यायालय का मुख्य स्थान है। गोवंश संस्कृति का निर्माता है या संस्कृति ही गोवंश निर्माण करती है, यह विचार का एक विषय हो सकता है, पर मेरे विचार में दोनों एक साथ ही रहेगें।

गाय मनुष्य का सर्वश्रेष्ठ हितैषी प्राणी है। तूफान, ओला, अनावृष्टि या बाढ़ आवे और हमारी फसलों को नष्ट करके हमारी आशाओं पर पानी फेर दे, किन्तु फिर भी जो बचेगा, उसी से गाय हमारे लिये पौष्टिक और जीवन धारण करने वाले आहार तैयार कर देगी। उन हजारों बच्चों के लिए तो गाय जीवन ही है, जो दूध रहित वर्तमान नारीत्व की रेती पर पड़े हुए हैं।

हम उसकी सिंघाई, उसके सौन्दर्य तथा उसकी उपयोगिता के लिए उसे प्यार करते हैं। उसकी कृतज्ञता में कभी कमी नहीं आई। हमारे ऊपर दुर्भाग्य का हाथ तो होना ही चाहिए, क्योंकि हम लोग सालों से अपने कर्तव्य से गिर गये हैं। हम जानते हैं कि गाय हमारे एक मित्र के रूप में है जिससे कभी कोई अपराध नहीं हुआ, जो हमारी सेवा का पाई–पाई चुका देती है और घर की तथा देश की रक्षा करती है। यह सर्वथा सत्य है कि –

गाय मरी तो बचता कौन।
गाय बची तो मरता कौन।।

श्री वाल्टर ए. डामर (अवर डम्ब एनीमल्स अमेरिका) मैं गौ की प्रशंसा करूँगा, किन्तु यों ही साधारण दृष्टि से नहीं, वरन् इसलिये कि वह इसकी अधि ाकारिणी है और ऐसा करना हमारा कर्तव्य है। मैं गाय को भगवत् सृष्टि के चर–प्राणियों में एक ऊँचे आदरणीय स्थान पर खड़ी देखना चाहूंगा। गाय से बढ़कर अन्य कोई भी मनुष्य का मित्र नहीं है और न गाय जैसा कोई मधुर स्वभाव वाला है। अपने दीप्त, शान्त और ध्यान निमग्न नेत्रों से संसार को देखने वाली गाय के सौम्य रूप में सचमुच देवत्व भरा है। उसमें एक महत्ता और भव्यता है, जो ग्राम देवता के उपयुक्त है। उसमें शत प्रतिशत मातृत्व है और उसका मनुष्य जाति से माता का सम्बन्ध है।

मैं यह नहीं मानता कि गाय एक उदास, अबोध और व्यक्तित्व शून्य प्राणी है, किन्तु ऐसा न मानने वाले किसी संशययुक्त मनुष्य को यह मनाना भी मेरे लिए कठिन है। जब तक मनुष्य अपने पशु–मित्रों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार न करेगा, तब तक वह उनकी अत्यन्त प्रिय मनोरम विशेषताओं के विषय में सदा अन्धेरे में ही रहेगा।

– साभार, पाणिनी प्रभा

गो मूत्र के सरलतम घरेलु औषधीय उपयोग

प्रतिदिन 50 मि.ली. भारतीय गाय का मूत्र सूती कपड़े की आठ परत कर छानकर प्रातः खाली पेट पियें। इस गोमूत्र के सेवन से एक घण्टे पहले और एक घण्टे बाद में कुछ खायें–पियें नहीं। इस प्रकार देशी गाय का मूत्र सेवन करने से पाईल्स, लकवा (पक्षघात), पथरी (मूत्र पित्त), दमा, सफेद दाग, टॉसिल्स, हार्ट अटैक (कोलेस्ट्रॉल), श्वेत प्रदर, अनियमित माहवारी, गठिया, डायबिटीज (मधुमेह), किडनी के रोग, रक्तचाप (ब्लड प्रेशर), सिरदर्द, टी. बी., कैंसर आदि रोग ठीक हो जाते हैं।

जलोदर : गोमूत्र 50 मिली और आधा ग्राम हरड़ (एरंड, तेल में भुनी हुई) रात्रि को गो दुग्ध से लेने से बवासीर रोग नष्ट हो जाता है।

पाण्डु (कामला में) : गोमूत्र 50 मिली. पुनर्नवा मूल का क्वाथ 100 मिली. दोनों मिलाकर प्रातः–सायं लें। शीघ्र लाभ होगा।

जुकाम में : गोमूत्र 50 मिली. प्रतिदिन पान करने से एवं गापालनस्य लेने से पुराना जुकाम ठीक हो जाता है।

उदरकृमि : गोमूत्र 50 मिली. 1 ग्राम अजवाइन चूर्ण के साथ प्रातःसायं सेवन करने से एक सप्ताह में कृमि नष्ट हो जाते हैं।

संधिवात में : (जोड़ों का दर्द व गठिया) महारास्नादि के क्वाथ के साथ गोमूत्र 50 मिली. प्रतिदिन सुबह–शाम सेवन करने से यह रोग ठीक हो जाता है।

दांत दर्द या पायरिया में : दांत व दाढ़ दर्द में गोमूत्र बहुत अच्छा कार्य करता है। जब दांत दर्द असह्य हो जाए तो गोमूत्र का कुल्ला करें। इससे बड़ा चमत्कारी प्रभाव होता है। गोमूत्र से प्रतिदिन कुल्ला करने पर पायरिया रोग समाप्त हो जाता है।

यकृत व प्लीहा की सूजन में : पांच तोला गोमूत्र में एक चुटकी नमक मिलाकर अथवा पुनर्नवा के क्वाथ में समान भाग गोमूत्र मिलाकर नियमित पीने से यकृत व प्लीहा की सूजन समाप्त हो जाती है।

चर्मरोग में : नीम, गिलोय क्वाथ के साथ दोनों समय गामूत्र के साथ सेवन करने से रक्त दोष जन्य रोग नष्ट हो जाते हैं। जीरे को गोमूत्र के साथ बारीक पीसकर लेप करने व मालिश करने से चमड़ी सुवर्ण एवं रोगरहित हो जाती है।

सुखी जीवन का रहस्य

प्रातःकाल की बेला में आचार्य अपने शिष्यों को सुखी जीवन का रहस्य पर उपदेश कर रहे थे। आचार्यजी के समझाने का ढंग औरों से अलग था वे प्रश्न और उत्तर के माध्यम से अपनी बातों की प्रस्तुति करते थे।

एक शिष्य ने पूछा जिन्दगी का रहस्य क्या है ? उत्तर दिया – अच्छा जीवन। वही जिन्दगी ठीक है जो सुख–सुविधा को प्राप्त कर जीवन बिताए, यही सुखी जीवन का रहस्य है। आचार्य ने कहा – अच्छे जीवन से क्या तात्पर्य है, जरा स्पष्ट करो।

शिष्य ने उत्तर दिया – गुरुजी, अच्छी जिन्दगी से मतलब जीवन में सुख सुविधा हो, धन का अभाव न हो, खाने–पीने, रहने पहनने आदि पर पर्याप्त खर्च किया जा सके, जिससे संसार का अधिक से अधिक भोग किया जा सके।

आचार्य – तुम्हारा आशय, खाना–पीना, रहना सुख व आनन्द का यही कारण है।

शिष्य – जी आचार्य जी।

आचार्य – तो फिर जिन लोगों के पास अपार धन है, सुख – सुविधा के साधन, जिनके पास विशाल इमारतें, खूबसूरत भवन है। वे संसार के भाग्यशाली व्यक्ति हैं, यही जीवन का रहस्य है।

शिष्य – जी आचार्य जी बिलकुल ठीक हैं।

आचार्य जी – अपने शिष्य को इस मिथ्या ज्ञान से हटकर उचित मार्ग दिखाना चाहते थे। इसलिए वे एक अत्यन्त धनवान व्यक्ति के पास ले गए, शिष्य जब उस भव्य इमारत में गया तो देखा भवन में बहुत कीमती साज–सज्जा के साधन हैं, कीमती कालीन बिछा है, नौकर है, घर के बाहर बाग हैं, वाहन खड़े हैं।

शिष्य अत्यन्त प्रसन्न था यह सोचकर कि गुरुजी उसके कथनों से संतुष्ट हैं और यहां आकर तो उसकी बात की और भी सार्थकता सिद्ध हो जावेगी।

आचार्य जी भवन के कई कक्षों में से गुजरते हुए एक कक्ष में गए जहां एक व्यक्ति चार पाई पर बीमार पड़ा था।

उसके हाथ–पैर काम नहीं करते, ठीक से बोलते नहीं बनता, अनेक प्रकार के रोगों ने घेर लिया था। दुःखों से त्रस्त होकर प्रभु से मौत की भीख मांग रहा थ, यह स्थिति उसकी कई दिनों से थी। पहले स्वस्थ शरीर की स्थिति में अपनी अपार सम्पत्ति का उपयोग असंयमित भोगों में, सुख विलास में की थी, भोगों ने यह हालत की है और अब धन–दौलत सब व्यर्थ थी, अपनी बीमारी पर बहुत कुछ लुटा चुका था, उसकी धन–सम्पत्ति किसी काम नहीं आ रही थी। अपनी सारी सम्पत्ति देकर भी स्वस्थ होने के उसने बहुत प्रयत्न किए किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। अब जीवन में धन–सम्पत्ति का मोह व नशा हट गया, प्राण बचाने की चिन्ता शेष रह गई।

आचार्य जी अपने शिष्य को यह दृष्य बताकर दूसरे धनी व्यक्ति के घर ले गए। इस व्यक्ति का भवन तो पहले वाले से भी बड़ा आलीशान था। शिष्य को वहां

जहाँ एक वृद्ध व्यक्ति अकेला एक छोटे से कमरे सिर झुकाए बैठा था, उसके पास जो वस्तुएं रखी थीं उन्हें देखकर पता लगता था कि यह इस घर का सदस्य नहीं कोई बहुत साधारण स्थिति वाला व्यक्ति है। किन्तु वही उस घर का स्वामी था, पता चला धन तो इसके पास था, उसका उपयोग इसने नहीं किया, न किसी अच्छे काम पर लगाया, धन बचा-बचाकर जोड़ता रहा। किन्तु अब उस पर कब्जा पुत्रों का है वृद्धावस्था में असहाय अशक्त होने पर उन्होंने सब जबरजस्ती प्राप्त कर लिया और अपने ऐशों आराम में प्रयोग कर रहे हैं। शराब पीते हैं, जुआं खेलते हैं, इस व्यक्ति की दुर्दशा कर रखी है, नौकरों जैसा व्यवहार करते हैं।

आचार्य तीसरी जगह भी एक सम्पन्न व्यक्ति के घर ले गए वह भी एक बड़ा रईस था पर कंजूसी के कारण न ठीक से खाता, न उसका धन किसी के काम आया था, परिवार में कोई सन्तान नहीं थी, पर पैसा जीवन भर संभालता रहा, वह असंतुष्ट था।

लालच के कारण बाहरी दुनिया से कटा हुआ था। समाज में कोई यश नही, उपेक्षित था, दुःखी जीवन बिता रहा था, उसके बाद धन का क्या होगा। इसी में उसका भूत, वर्तमान व भविष्य तीनों बेकार हो गए।

अब आचार्य जी शिष्य को साधारण, मध्यम आय वाले के घर ले गए। जाकर देखा परिवार के व्यक्ति स्वस्थ हैं, धार्मिक वातावरण घर का है, जीवन में संतुष्टि के लक्षण सब में हैं, सेवाभावी हैं, कुछ देर बात करने पर पता चला कि जीवन से संतुष्ट हैं, सुखी हैं, समाज में मान-सम्मान है। परमार्थ की भावना होने से परिवार में जब भी कोई संकट हुआ है तब समाज खड़ा हो गया और पूरा सहयोग दिया।

शिष्य धीरे-धीरे मन में चारों स्थानों की स्थिति पर विचार कर रहा था उसे अपनी बात पर सन्देह होने लगा अब उसका विश्वास जीवन के रहस्य धन, दौलत, सम्पत्ति है, डगमगा रहा था, शिष्य के अर्न्तद्वंद को समझते हुए।

आचार्य बोले – वत्स, धन-दौलत, सम्पत्ति बाहरी सुख-सुविधा प्रदान कर सकते हैं किन्तु एक समय और एक सीमा तक। समय और सीमा के पश्चात इनकी तुलना घर के कुडे-कचरे के समना हो जाती है, जो सिर्फ फेंकने के काम का रह जाता है।

किन्तु धन सम्पत्ति को लक्ष्य पर पहुंचने का साधन मानकर जो इसका त्याग भाव से अपने लिए उपयोग करते हैं, दूसरों के लिए भी उपयोग करते हैं, उनका धन सार्थक होता है।

धन संग्रहित कर उसका सही उपयोग जो नहीं करते उन अभागों की स्थिति कोषागार (बैंक) के चौकीदार जैसी होती है जो धन की देखभाल सुरक्षा तो करता है पर उपयोग नहीं कर सकता।

सुखी जीवन का रहस्य है परमार्थ और त्याग भाव जो जीवन के इस रहस्य को समझ गया उन्हीं का जीवन सफल है अन्यथा तीनों धनाढ्य जो अपार

धन–सम्पत्ति के स्वामी तो थे पर धन किसी काम का नहीं जीवन अभिशाप बना हुआ था, धन की ऐसी स्थिति को "धन का नाश" कहते हैं। मानव जीवन का रहस्य आगामी जीवन को जिसे परलोक कहते हैं उसे भी सुधारना है और उसके लिए क्या जरूरी है सुनो –

धनानि भूमौ पशुवश्वः गोष्ठे।
नारि गृहद्वारी जनाः श्मशान।।
देहश्चितायाम् परलोक मार्गे।
धर्मानुगो गच्छति जीव एकः।।

अर्थात् – ये धन, ये पशु सब इसी भूमि पर छोड़ना पड़ेगा, जिसे अर्धांगिनी कहता है वह तेरी पत्नी भी तेरी बिदायी के समय तेरा साथ घर की देहरी तक देगी, तेरे मित्र, सगे–संबंधी तेरा साथ श्मशान तक दे देगें और तेरी देह तेरा साथ चिता तक दे देगी, इसके बाद तू अकेला रह जावेगा। इस अकेलेपन में तेरा साथी कौन? कभी सोचा तूने ?

सुन, आगे तेरा साथ तो तेरे शुभ कर्म, धर्माचरण से प्राप्त पूंजी ही देगी। वही परलोक के साथी हैं।

इसलिए वत्स जीवन का रहस्य भौतिक साधन नहीं, शुभ कर्म हैं जिनमें सत्याचरण, धैर्यता, क्षमाशीलता, दान, परोपकार की भावना, इन्द्रियों की शुचिता व नियन्त्रण है।

शिष्य – आचार्य जी धन्य हुआ, आपने मुझे भटके हुए को जीवन का सही मार्ग दिखा दिया।

इसलिए कहा – कंजूस का धन परछाई के समान है, जिसका लाभ उसे कभी नहीं हो सकता, जैसे परछाई पास होते हुए भी स्वयं के लिए निरर्थक होती है।

प्रिय पाठकवृन्द,

वैदिक रवि आपका अपना, अपनी सभा का पत्र है। प्रयास किया जा रहा है कि यह अत्यन्त रोचक, ज्ञानवर्धक पत्रिका बनें। हमारी अपनी बात उन लोगों तक भी पहुंचना चाहिए जो वैदिक विचारों से दूर हैं। इसी भावना से पत्रिका सम्पादन का प्रयत्न सरलतम किया जा रहा है जिसे प्रत्येक व्यक्ति पढ़े और इसे पसन्द करे। इसके अधिक से अधिक पाठक हो सकें, इसलिए वैदिक रवि के ग्राहक संख्या बढ़ाने में सहयोगी बनें, अपने परिवार, मित्रों, सगे संबंधियों को इसके ग्राहक बनाइए। साथ ही अपनी वार्षिक सहयोग राशि भी प्रेषित करें।

विशेष–बार–बार निवेदन किया जा रहा है कि पत्रिका का और अच्छा स्तर बनें। इस हेतु अपने या स्थापित विद्वानों के लेख, विचार, कविता, समाचार महू के पते पर प्रेषित करें। कृपया इस ओर ध्यान देवें।

महाकुम्भ में वैदिक धर्म प्रचार शिविर का समापन

सार्वदेशिक सभा के निर्देशन में एवं मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में वैदिक धर्म प्रचार समिति उज्जैन द्वारा वैदिक धर्म के सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार, अन्ध विश्वास एवं पाखण्ड खण्डनार्थ विशाल शिविर लगाया गया। उज्जैन में क्षिप्रा तट पर आयोजित कुंभ मेले के अवसर पर वेद प्रचार एवं चतुर्वेद पारायण महायज्ञ का विराट् एवं भव्य आयोजन किया गया था, जिसमें विभिन्न प्रान्तों की आर्य समाजों के पदाधिकारीगण एवं आर्यजनों के विशाल जन समूह को देखते ही बनता था। इतना बड़ा आर्य जन समूह अभी तक के कुंभ मेलों के इतिहास में पहली बार देखने को मिला।

अनेक श्रोताओं ने सनातन धर्म के प्रचार का ऐसा प्रयास आर्य समाज के माध्यम से आयोजित शिविर में होना बताया। जिसमें योग-आसन, प्राणायाम, यज्ञ, भजन, प्रवचन, कवि सम्मेलन, धर्म रक्षा, राष्ट्र रक्षा, समाज रक्षा, मानव रक्षा आदि महत्वपूर्ण विषयों पर आयोजन किए गए, जिसमें अनेक विद्वानों के व्याख्यान हुए। साथ ही विचार टी वी सिनेमा हॉल, भारत दर्शन प्रदर्शनी जिसमें अनेक महापुरुषों के चित्र सहित उनके योगदान की झांकी लगाई गई शिविर में 50 से अधिक विद्वानों के व्याख्यान हुये जिसे लाखों लोगों ने सुना व सराहा।

विशेष निवेदन

निवेदन है कि सभी आर्य जनों को 'वैदिक धर्म प्रचार शिविर' तन मन धन से सहयोग करने के लिये धन्यवाद सहित जिन महानुभावों के पास **"वैदिक धर्म प्रचार शिविर"** की रसीद बुकें हैं, वे कृपया यथा शीघ्र आर्य समाज मन्दिर, आर्य समाज मार्ग, उज्जैन (म. प्र.) में यथाशीघ्र जमा करने की कृपा करें। ताकि सिंहस्थ का आय-व्यय का ऑडिट करवाया जा सकें।

आर्य लक्ष्मीनारायण पाटीदार
संयोजक
वैदिक धर्म प्रचार शिविर
मोबा. 09827078880

प्रांतीय सभा से प्रचार हेतु पुस्तकें व स्टीकर प्राप्त करें

मानव कल्याणार्थ

आर्य समाज के दस नियम

1. सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।
2. ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरुप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।
3. वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।
4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।
5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।
6. संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।
7. सब से प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार यथायोग्य बर्तना चाहिए।
8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।
9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में संतुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में ही अपनी उन्नति समझनी चाहिए।
10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

पंजीयन संख्या म.प्र./भोपाल/32/2015-17

एम.पी.एच.आई.एन. 2003 12367

अवितरित रहने पर कृपया निम्न पते पर लौटायें

मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा

तात्या टोपे नगर, भोपाल-462003(म.प्र.)

मुद्रक, प्रकाशक, इन्द्र प्रकाश गांधी द्वारा कौशल प्रिन्टर्स, भोपाल से मुद्रित कराकर मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा कार्यालय, तात्या टोपे नगर, भोपाल से प्रकाशित। संपादक - प्रकाश आर्य, महू

98262-71062